कितनी खतरनाक थी लेनिन की सोच

आज पूरे विश्व में भगवदगीता का प्रकाशन होता है। आज भी भारत में संत कबीर, संत रविदास, समर्थ गुरु रामदास, संत तिल्लुवल्लूवर, संत एकनाथ और संत नामदेव का नाम लिया जाता है। ये सब महात्मा झोपड़ी में रहे परंतु इनके विचार आज भी हमें प्रकाशित करते हैं।

अब गरीबों की बात करने वाले कम्युनिस्टों के 3 पिताओं में से दूसरे पिता लेनिन की बात करते हैं। लेनिन की टूटी हुई मूर्ति पूर्वी जर्मनी में फोटोग्राफर मेत्स को घनी झाड़ियों के पीछे छुपा हुआ मिला. जर्मनी से जब सोवियत सेना यह इलाका छोड़ कर जा रही होगी तब इसे कचरे में फेंक दिया गया। आज रूस में लेनिन और मार्क्स नहीं टॉलस्टाय बड़े विचारक माने जाते हैं। आज चीन में माओ नहीं कन्फ़्यूशियस बड़े विचारक हैं। भारत के त्रिपुरा में कम्युनिस्ट शासन खत्म होते ही लोगों ने लेनिन की मूर्ति को हटा दिया। 1990 में पूर्वी जर्मनी से कम्युनिस्ट कब्जा खत्म होते ही लेनिन और मार्क्स के विचारों को कब्र में दफना दिया गया।

साम्यवाद (Communism)अर्थात – नकारना। अस्वीकरण और सत्य से विमुख रहने की कला ही साम्यवाद है। लेनिन के उस ऐतिहासिक विप्लव (Revolution) के सच को नकारता ही आया है, जो लाखों बेगुनाहों की मौत की विभीषिका का आधार बनी।

1917 में लेनिन के वापस लौटने के बाद रूस तीन साल तक गृहयुद्ध की आग में जला। आखिरकार बोल्शेविक जीते और सारे देश का नियंत्रण हासिल कर लिया। जुलाई, 1918 में बोल्शेविकों ने जार निकोलस द्वितीय को उसकी पत्नी और पाँच बच्चों के साथ फाँसी दे दी। क्रांति के बाद रूस में गृह युद्ध एक बड़ी समस्या बनकर उभरा। सिविल वॉर वहाँ की 'रेड आर्मी' और 'व्हाइट आर्मी' के बीच था। रेड आर्मी बोल्शेविक तर्ज के समाजवाद के लिए लड़ रही थी, जबकि व्हाइट आर्मी समाजवाद के विकल्प के रूप में पूँजीवाद, राजशाही के लिए लड़ रही थी। 1920 में बोल्शेविकों ने लेनिन के नेतृत्व में विरोधियों को हरा दिया और 1922 में यूनियन ऑफ सोवियत सोशलिस्ट रिपब्लिक्स (यूएसएसआर) की स्थापना हुई।

रूस में 25 अक्तूबर (या 7 नवंबर) 1917 की घटना को पहले अक्तूबर या नवंबर क्रांति कहा जाता था, लेकिन 1991 में कम्युनिज्म के विघटन के बाद स्वयं रूसी उसे 'कम्युनिस्ट पुत्स्च' यानी "तख्तापलट" कहने लगे, जो वह वास्तव में था।

लेनिनवादी कम्युनिस्टों ने शुरू से ही क्रूरतम हिंसा, सामूहिक, बर्बर संहार का उपयोग किया। उन्होंने

उसके लिए पेशेवर, भयंकर अपराधियों, गंदे लोगों से अपनी पार्टी-राज्य मशीनरी को भर लिया, क्योंकि वही लोग नीचतम, पाशविक हिंसा कर सकते थे। उसके बिना कम्युनिस्ट सत्ता टिक ही नहीं सकती थी।

रूस में 1917-21 के बीच चला गृह-युद्ध यही था। किन्तु इस तरह सारे वास्तविक, संदिग्ध, संभावित विरोधियों का समूल संहार करके भी, अगले 6-7 दशक भी सदैव उसी तानाशाही, बेहिसाब हिंसा, सेंसरशिप, यातना शिविर और जबरदस्ती के बल पर ही रूस में कम्युनिस्ट शासन चल सका। महान रूसी लेखक सोल्झेनित्सिन का ऐतिहासिक ग्रंथ "गुलाग आर्किपेलाग" (1973) उस भयावह सचाई का एक सीमित आकलन भर है। सत्ताधारी कम्युनिस्टों की वह हिंसा उसी जरूरत और उसी भावना से चीन, वियतनाम, कम्बोडिया, पूर्वी यूरोप आदि जगहों पर चली, जिसने अपने-अपने निरीह दसियों-करोड़ देशवासियों को खत्म किया। उसी के साथ वह सिद्धांत भी खत्म हो गया जिसे "मार्क्सवाद-लेनिनवाद" कहा गया था।

'यूजफुल ईडीयट्स - Useful Idiots' एक विश्व-विख्यात मुहावरा है। मुहावरे के जन्मदाता रूसी कम्युनिज्म के संस्थापक लेनिन थे। अर्थ था: वे बुद्धिजीवी जो अपनी किसी हल्की या भावुक समझ से कम्युनिस्टों की मदद करते थे। बाहरी बुद्धिजीवियों को लेनिन सचमुच बकवादी/मूर्ख समझते। पर जो कम्युनिस्टों की मदद करता, उसकी तात्कालिक उपयोगिता मानकर 'उपयोगी मूर्ख' कहा गया। इतिहास गवाह है कि शोषित-पीड़ित पक्षधरता के नाम पर दुनिया में असंख्य लेखकों, कवियों, प्रोफेसरों ने कम्युनिस्टों को सहयोग दिया ; और बाद में उन्हीं के हाथों लांछित-प्रताड़ित हुए या मारे गए। जिन्हें प्रमाणिक विवरणों की जरूरत हो, वे प्रसिद्ध अमेरिकी लेखक हावर्ड फास्ट की पुस्तक "द नेकेड गॉड: द राइटर एंड द कम्युनिस्ट पार्टी" (1957) पढ़ सकते हैं।

आज भारत में नक्सलियों और इस्लामी आतंकवादियों के लिए सहानुभूति रखने वाले बुद्धिजीवियों के लिए यह मुहावरा बिलकुल सटीक है। कुछ पहले एक हिन्दी कवि ने संसद पर हमला करने वाले आतंकी मुहम्मद अफजल की तुलना भगत सिंह से की। फिर दिल्ली में कुछ बड़े बुद्धिजीवियों ने माओवादी विनायक सेन की तुलना नेल्सन मांडेला से की। उनमें से किसी ने संविधान संशोधन कर उस कानून को ही खत्म कर देने की माँग की जिससे सेन को दोषी पाया गया। उसने तर्क यह दिया कि 'देश-द्रोह' वाला कानून अंग्रेजों का बनाया हुआ था, इसलिए उसे हटा देना चाहिए। जिन बुद्धिजीवियों ने इस कानून को खत्म करने की माँग की, उन्हें इसका भान भी नहीं कि वे कह क्या कह रहे हैं ? वे देश के विसर्जन की बात कर रहे हैं! अर्थात, ठीक वही चीज जो कई आतंकवादी गिरोहों, माओवादियों, षडयंत्रकारी मिशनरियों और पाकिस्तानी आई.एस.आई. की भी खुली चाह है। कि यह भारत नामक देश यदि पूरी तरह उनके कब्जे में न आ सके, तो कम से कम टूटकर कमजोर तो हो, ताकि टुकड़े-टुकड़े उनके कब्जे आने की संभावना बने। कोई हिस्सा 'जिन्ना के अधूरे काम' को पूरा करने के काम आए, तो कोई 'मुगलिस्तान', कोई माओवादी 'मुक्त इलाका', कोई 'ईसाई राज्य' या 'दलित लैंड' बन जाए। कृपया स्मरण रखें, इनमें से एक भी काल्पनिक नाम नहीं है। विविध बयानों, राजनीतिक प्रचार, दस्तावेज, यहाँ तक कि सरकारी आयोग की रिपोर्ट में इन्हें देखा जा सकता है।

1999 ई. में पोप के वेटिकन में एक अंतर्राष्ट्रीय ईसाई-इस्लामी संवाद आयोजित हुआ था। उसमें एक बड़े इस्लामी आलिम ने साफ कहा, "तुम्हारे लोकतंत्र के सहारे हम तुम पर हमला करेंगे और अपने

मजहब के सहारे तुम पर अधिकार करेंगे।" यह घटना संवाद में भागीदार एक ईसाई महामहिम गिसेप बर्नार्डीनी ने बताई थी। ऐसी बेधड़क घोषणाओं के पीछे लेनिन वाला जड़ विश्वास ही है, जो दूसरों का इस्तेमाल करते हुए भी उन्हें हीन, तुच्छ समझने में संकोच नहीं करता। किंतु दूसरों को तो सोचना चाहिए कि ऐसे क्रांतिवादी, जिहादी अगर सफल हुए तो क्या होगा?

मुहम्मद अफजल या विनायक सेन को भगत सिंह और नेल्सन मांडेला बताने वाले बुद्धिजीवी किसी के हितैषी नहीं। वे निरे-नादान या भारी धूर्त हैं, जो लोकतंत्र की स्वतंत्रता का दुरुपयोग कर लोकतंत्र को ही खत्म करने की तैयारी में लगे गिरोहों की मदद कर रहे हैं। यह छिपी बात भी नहीं। जिहादी और माओवादी बयानों, दस्तावेजों में जगह-जगह डंके की चोट पर लिखा है कि उन्हें वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था का अंत कर अपनी मजहबी या माओवादी तानाशाही स्थापित करनी है।

साभार https://www.facebook.com/arya.samaj/photos/ से